वृद्धों की समस्याएँ : पारिवारिक मूल्यों में ह्रास का परिणाम

डा0 कविता वर्मा,
असि0 प्रो0, समाजशास्त्र विभाग
राजकीय महाविद्यालय, बी0बी0नगर, बुलन्दशहर
Email:kavitasahdev@gmail.com

सारांश

वर्तमान में विश्व के सभी समाज तमाम प्रकार के संकटों से गुजर रहे हैं। ये संकट भौगोलिक, पर्यावरणीय, राजनैतिक, सामाजिक, पारिवारिक व मनोवैज्ञानिक स्वरूपों में प्रकट हो रहे हैं। इन सभी में सबसे अधिक जटिल सामाजिक सकट मानें जा रहे हैं क्योंकि हमारा समाज ही सम्बन्धों की एक जटिल व्यवस्था है जो कि प्रगति व विकास के साथ और भी जटिल होता जा रहा है। साथ ही पर्यावरण, राजव्यवस्था, अर्थ व्यवस्था, अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों के फलस्वरूप बढ़ता बाजार, मानवीय जीवन की तीव्र गतिशीलता, नये–नये आविष्कार व दैनिक जीवन में उपकरणों, का बढ़ता प्रयोग, सामाजिक सम्बन्धों में तृतीयक सम्बन्धों (जिसमें व्यवहार के लिए किसी माध्यम जैसे टेलीफोन, मोबाईल, इन्टरनेट का प्रयोग बहुतायता से किया जाता है) का बढ़ता चलन सामाजिक संकटो को जन्म दे रहा है। इन सामाजिक संकटों का प्रत्यक्ष प्रभाव हमारी परिवार व्यवस्था पर स्पष्ट दिखायी दे रहा है। इस पारिवारिक व्यवस्था में जो निर्बल व असहाय वर्ग हैं जिसमें हम बुजुर्गों को पाते हैं वह सबसे अधिक समस्या ग्रस्त है। एक ओर तो उनकी स्वय की बढ़ती उम्र में शारीरिक क्रियाशीलता की कमी व गिरता स्वास्थ्य, दूसरी ओर आर्थिक रूप से अपने परिवार पर आश्रित होना तथा इसके साथ उनके अकेलेपन व सम्मानीय जीवन जीने का संकट का तेजी से बढ़ता जा रहा। बुजुर्गों की पारिवारिक समस्याओं के लिए हमारे गिरते सामाजिक व पारिवारिक मूल्य भी जिम्मेदार है।

प्रस्तावना

वर्तमान समय में सामाजिक मूल्यों का पतन सभी समाजों की सबसे गम्भीर समस्याओं में से एक है। इसी के परिणामस्वरूप ही हम देखते हैं कि वैयक्तिक विघटन, पारिवारिक विघटन तथा सामाजिक विघटन दिन–प्रतिदिन बढ़ता जा रहा है। सामाजिक संरचना की विभिन्न इकाइयां इससे ग्रसित होती चली जा रही हैं, जिसके कारण चहोओर अव्यवस्था व त्राहि की स्थिति उत्पन्न हो रही है। यह यकायक वर्तमान में ही उत्पन्न हुयी समस्या नहीं है, वरन् बहुत पहले से ही कुछ विचारकों द्वारा मूल्यों के ह्रास से उत्पन्न होने वाले खतरों का अनुभव किया जा चुका है। स्पेग्लर[1] ने भविष्यवाणी की थी कि, ''पश्चिम में यान्त्रिक प्रौद्यौगिकी का इतिहास तेज गति से अपने अनिवार्य अन्त की ओर जा रहा है। प्रत्येक संस्कृति के महान् स्वरूपों के समान

यह स्थिति भी स्वयं ही अपने आपको समाप्त कर देगी, कब और किस तरह, यह हम नहीं जानते। श्री अरविन्द[2] के अनुसार, ''मनुष्य ने एक ऐसी सभ्यता का निर्माण कर लिया है जो उसकी सीमित क्षमता व बुद्धि से कहीं अधिक बड़ी है। इसे उसकी सीमित, नैतिक और आध्यात्मिक शक्ति न तो सही उपयोग में ला सकती है और न ही व्यवस्थित कर सकती है। यह सभ्यता उसके अंहकार और वासनाओं का एक खतरनाक साधन है।'' जब समाज में मूल्यों का ह्रास होता है तो इसका प्रत्यक्ष सम्बन्ध परिवार से होता है, क्योंकि परिवार ही समाज की मूलभूत इकाई है। कोई भी समाज हो आदिम या आधुनिक, सरल या जटिल ग्रामीण या शहरी, सभी की मूलभूत इकाई परिवार ही है। अतः जब समाज में मूल्यों का ह्रास होता है तो उसका प्रत्यक्ष प्रभाव परिवारों की संरचना व प्रकार्यों में देखा जा सकता है।

आधुनिक समय में पारिवारिक समस्याओं के अन्तर्गत वृद्धजनों से सम्बन्धित समस्याओं के प्रति विभिन्न समाज वैज्ञानिकों की रूचि तेजी से बढ़ती जा रही है। भारतीय समाज में वैदिक सभ्यता के प्रारम्भिक समय से ही वयोवृद्ध व्यक्ति परिवार की इकाई के केन्द्र बिन्दु रहे तथा संयुक्त व विस्तृत परिवारों की व्यवस्था में उन्हें सबसे सम्मानीय स्थान प्राप्त रहा। परिवार के समस्त सामाजिक, धार्मिक, आर्थिक अधिकार वृद्धों को ही प्राप्त रहे तथा उन्हीं के निर्देशानुसार युवा कार्य करना अपना सौभाग्य मानते। इस प्रकार के सामाजिक प्रतिमान ने वृद्धों को सामाजिक, आर्थिक, मानसिक व भावनात्मक सुरक्षा प्रदान कर रखी थी। साथ ही जातिगत कार्यों को करने के कारण उम्रदराज व्यक्ति ही सबसे अधिक अनुभवी होता तथा युवा व बच्चे उसी की देखरेख व संरक्षण में अपने कार्यों को करना सीखते। शिक्षा भी अनौपचारिक रूप से वृद्धों के द्वारा ही प्रदान की जाती थी। किन्तु औपचारिक व तकनीकी शिक्षा का प्रारम्भ, कारखाना पद्धति का विकास, नौकरियों में नित नयी सम्भावनायें, पूँजी व धन का बढ़ता महत्व, नगरीकरण, औद्योगिकीकरण, यातायात व संचार के साधनों का विकास, जातिगत कार्यों में कमी, व्यक्तिगत आय की प्रणाली, व्यक्तिगत महत्वकाक्षांओं की पूर्ति, बढ़ती मंहगाई व बच्चों का बढ़ता खर्च के कारण संयुक्त परिवारों का क्षय होने लगा तथा वृद्ध जो संयुक्त परिवार की धुरी होते थे उनका अस्तित्व ही संकट के द्वार तक पहुँच गया। आज वृद्धों को मृत्यु का भय नहीं अपितु वृद्धावस्था में जीवन जीने का भय है, क्योंकि इन परिवर्तनों से परम्परागत सामाजिक मूल्यों में भी परिवर्तन होने लगा फलस्वरूप उसका प्रत्यक्ष परिणाम संयुक्त परिवार की धुरी वृद्धों पर दिखने लगा।

सामाजिक मूल्य व्यक्ति को उसके पद व भूमिका के अनुसार अपने कर्तव्य निर्वाह का निर्देशन देते हैं। जानसन[3] ने कहा है कि ''सामाजिक मूल्य एक सांस्कृतिक मानदण्ड है जिसके द्वारा विभिन्न दशाओं के बीच तुलना की जाती है, उन्हें स्वीकार या अस्वीकार किया जाता है अथवा एक–दूसरे की तुलना में उन्हें कम या अधिक उपयोगी माना जाता है।'' मूल्यों को परिभाषित करते हुए लेस्ली[4] ने कहा है, ''किसी विचार या वस्तु की सापेक्षित आवश्यकता की सामूहिक धारणा ही मूल्य है।'' राधाकमल मुखर्जी[5] ने मूल्यों पर बहुत ही विस्तृत लिखा है। उनके अनुसार, ''मूल्य सामाजिक रूप से मान्यता प्राप्त समूह की वे इच्छायें व लक्ष्य हैं जिनका

सामाजिक सीख की प्रक्रिया के द्वारा व्यक्ति के जीवन में आन्तरीकरण हो जाता है और इस प्रकार व्यक्ति इन्हीं को अपने व्यवहारों की प्राथमिकताएँ, मानदण्ड और आकाक्षाएँ मान लेता है।'' अर्थात् सामाजिक मूल्यों का कोई स्थूल स्वरूप नहीं होता, इनका सम्बन्ध समाज द्वारा स्वीकृत उन लक्ष्यों से है जिनके अनुसार व्यक्ति से व्यवहार करने की आशा की जाती है। ''प्रत्येक समाज का अस्तित्व उसके मूल्यों पर ही आधारित होता है। कोई समाज यदि अपने अस्तित्व को बनायें रखना चाहता है तो उसके लिए यह आवश्यक है कि वह अपने सदस्यों के लिए सर्वोच्च मूल्यों की पूर्ति नियमित रूप से करता रहे।

इस तरह सामाजिक मूल्यों के माध्यम से व्यक्ति समाज के अनुरूप अपने कार्यों को करता व भूमिका को निभाता है। ये मूल्य समाज में सामंजस्य व एकरूपता का भी कार्य करते हैं। समाज के विभिन्न क्षेत्रों में तथा व्यक्ति के विभिन्न कर्तव्यों में सामाजिक मूल्यों की झलक दिखायी देती है। हमारे सामाजिक मूल्यों में बुजुर्गो व बड़ों का सम्मान करना, उनकी देखभाल करना तथा दूसरों के प्रति अपने कर्तव्यों का पालन करने की आशा की जाती है। हमारे धार्मिक ग्रन्थों यथा रामायण, निति वाक्यों, पौराणिक गाथाओं, साहित्य इत्यादि के माध्यम से पारिवारिक व सामाजिक मूल्यों के बारे में अवगत कराया जाता है जो व्यक्ति को सामाजिक संरचना के अन्तर्गत सही व गलत की जानकारी देते हैं। इन सामाजिक व पारिवारिक मूल्यों के माध्यम से हमारी परम्परागत पारिवारिक व्यवस्था सदृढ़ रही तथा कमजोर व असहायों के लिए सामाजिक सुरक्षा का कार्य भी करती रही। इसी प्रकार मनुस्मृति[6] में लिखा गया है कि –

अभिवादयेद् वृद्धांश्च दयाच्चैकासनं स्वकम्।
कृतांजलिरूपासीत गच्छतः पृश्ठबोधन्वियात्।।

अर्थात् वृद्धों का सदा सम्मान करना चाहिए, यदि वे हमारे समीप खड़े हैं तो उठकर पूर्ण सम्मान के साथ उन्हें अपना आसन दें तथा हाथ जोड़कर उनके समीप बैठकर उनके पूछे गये प्रश्नों का उत्तर दें तथा उनके जाते समय पूर्ण सम्मान के साथ उन्हें प्रणाम कर विदा करें। किन्तु वर्तमान परिदृश्य उनकी दयनीय स्थिति दर्शाता है। अब अपने परिवार में ही वह अपेक्षित सम्मान के लिए तरसते हैं। वृद्धा आश्रमों की बढ़ती संख्या तथा उनके लिए बनते नये कानून इसी को प्रकट करते हैं कि परिवार में उनकी कितनी उपेक्षा हो रही है कि अपने जीवन के लिए उन्हें राज्य का सहारा लेना पड़ रहा है। आधुनिकीकरण के कारण समाज में तीव्र गति से हो रहे परिवर्तन में बदलते व गिरते सामाजिक मूल्यों के साथ वह सामंजस्य नहीं कर पा रहे तथा व्यक्तिवादिता की उत्कर्ष अभिलाषा के तहत व्यक्ति /युवा अपनी स्वार्थ पूर्ति में ही लगा रहता है, जिसके तहत विभिन्न सामाजिक व पारिवारिक समस्यायें प्रकट हो रही हैं और बुजुर्गों के सम्मानपूर्वक जीवन जीने की समस्याऐं सामने आ रही हैं।

वृद्धावस्था को यदि समाजशास्त्रीय भाषा मे वर्णित किया जाय तो यह उस अवस्था के रूप में जानी जाती है जिसमें व्यक्ति की सामाजिक भूमिका में परिवर्तन आता है और इस प्रकार यह जैविक से अधिक सामाजिक व्यवस्था द्वारा प्रभावित होती है।[7] वृद्धावस्था की कोई सर्वमान्य

परिभाषा नहीं है किन्तु यह सर्व स्वीकृत है कि मानव जीवन के चक्र के अन्तिम पड़ाव को वृद्धावस्था का नाम दिया गया है। इसे एक जैवकीय, मनोसामाजिक व व्यवहारात्मक पहलू कहा जा सकता है। साधारणतः बालों का सफेद होना, त्वचा में झुर्रियां पड़ना, शारीरिक रूप से कमजोर होना, याददाश्त में कमी, दृष्टि का कमजोर होना, बच्चों का गृहस्थ आश्रम में प्रवेश करना तथा पौत्र–पौत्रियों का आगमन वृद्धावस्था का प्रारम्भ माना जाता है। चन्द्रपाल सिंह[8] के अनुसार किसी भी व्यक्ति की शारीरिक व मानसिक स्थितियों पर आधारित होता है न कि आयु के अनुसार। वे मानते हैं कि वृद्धावस्था एक व्यक्तिगत प्रक्रिया है तथा यह अलग–अलग व्यक्तियों में अलग–अलग गति से होती है। यदि यह कह जाय कि वृद्धावस्था कब प्रारम्भ होती है तो कालक्रमानुसार आयु निर्धारण को हमारे समाज में महत्व दिया जाता है। जैसे भारत में 60 वर्ष की आयु को वृद्धावस्था का प्रारम्भ माना जाता है। जे0 एस0 राठौर[9] ने भी माना कि संयुक्त परिवार व्यवस्था मे परिवार के असहाय, अनाथ, विधवा, विधुर, परित्यक्त, सेवानिवृत्त व वृद्ध लोगों के लिए आर्थिक, मनोवैज्ञानिक व सामाजिक सुरक्षा प्रदान की जाती है। संयुक्त परिवार को उसी कारण एक 'बहुमुखी कल्याणकारी योजना' माना है। आधुनिक भारत में औद्योगीकरण, नगरीकरण, आधुनिकीकरण, धर्म के महत्व में कमी, तीव्र सामाजिक गतिशीलता तथा व्यक्तिवादी व भौतिकवादी मूल्यों के प्रसार से संयुक्त परिवार तेजी से विघटित होते जा रहे हैं। संयुक्त परिवारों के विघटन से परिवारों पर आश्रित व्यक्तियों का जीवन समस्याग्रस्त होता जा रहा है। समाज का वृद्ध वर्ग जो एक ओर समाज की पुरातन व्यवस्थाओं एवं परम्पराओं का पोषण करता है वो दूसरी ओर अपने जीवन में अर्जित व्यापक आनुभाविक ज्ञान से नवीन पीढ़ी का मार्ग दर्शन करते हुए उन्हें प्रगति की दिशा में अग्रसारित करता है। इस प्रकार वृद्ध वर्ग समाज के अतीत व भविष्य के बीच एक सशक्त सेतु के रूप मे कार्य करता है। नसरीन आसिया[10] का मानना है कि परिवार की संरचना व कार्यों में परिवर्तन हुआ है। महिलाओं की नवीन भूमिका कि वह घर के बाहर के अपने कार्यों को संभालती हैं, युवा अधिक धन कमाने की लालसा में स्वार्थ केंद्रित हो रहे हैं तथा व्यक्तिवादी मूल्य बढ़ते जा रहे हैं। इन सभी का प्रभाव यह हुआ कि परिवार में जो युवा व बच्चे एक–दूसरे व बुजुर्गों का ध्यान रखते थे, में कमी आयी इस परिवर्तन के कारण बुजुर्गों को घर में समायोजन में प्रतिकूलन का सामना करना पड़ रहा है।

विभिन्न पारिवारिक व सामाजिक मूल्य जैसे वृद्धों का सम्मान करना, उन्हें अपना पथ–प्रदर्शन समझना, दीन व असहायों की सेवा व देखभाल करना आज के समय में बदलते जा रहे हैं। मूल्य जो व्यक्ति को कार्य व व्यवहार करने के संकेत देते रहे हैं वह आज उसकी स्वार्थों की पूर्ति व व्यक्तिवादिता की अंधी दौड की आंधी में धुमिल हो चुके हैं। जिसके कारण परिवार तमाम प्रकार के सामाजिक व पारिवारिक संकटों से गुजर रहा है। परिवार का पुरातन संयुक्त स्वरूप टूट रहा है। संयुक्त परिवारों के टूटने से बनने वाले केन्द्रिय परिवार भी अपनी सही दिशा निर्धारित नहीं कर पा रहे हैं। औद्योगीकरण व नगरीकरण के परिणामस्वरूप व्यक्तिगत आय की प्रणाली की शुरूवात हुयी है, इससे परिवारों को परम्परागत स्वरूप ढ़हता जा रहा है। आज

परिवार का संयुक्त ढॉचा चरमरा रहा है। यहॉ की स्वदेशी ग्रामीण संस्कृति को संरक्षित रखने वाली कृषि और उससे जुड़े तीन चार पीढ़ीयों के परिवार के संयुक्त ढांचो को सह पाने की क्षमता अब कमजोर पड़ रही है। बटवारे की संस्कृति के तहत अब पारिवारिक रिश्ते इंच प्रति इंच जमीन के लिए खून की होली खेल रहे हैं। यह मुद्दा इसलिए और भी गम्भीर हो गया क्योंकि अब छोटे–छोट स्वार्थों को लेकर रक्त संबंध भी पारिवारिक भावनाओं की बलि चढ़ाने को तैयार हैं।''

वृद्धों की एक बडी समस्या एकाकीपन की भी है। बदलती सामाजिक व्यवस्था और घरों के सिकुडने से परिवार छोटे हुए तथा औपचारिक व तकनीकी शिक्षा से परिवारों में बुजुर्गो की भूमिका भी कम हुयी है। नयी पीढ़ी का अनौपचारिक व सामाजिक रूप से शिक्षित करना घर के बुजुर्गों की ही जिम्मेदारी होती थी, किन्तु अब बच्चे स्कूली शिक्षा व हॉवी क्लासेस के बाद मोबाइल, टी0 वी0 व इन्टरनेट पर ही उलझे रहते हैं, उनके पास घर के बुंजुर्गों से बात करने का समय ही नहीं है। शहरों में आर्थिक आत्मनिर्भरता की विचारधारा के चलते परिवार को चलाने मे पति–पत्नी दोनों कामकाजी हो गये, जिससे उनके पास अपने माता–पिता से बात करने का भी समय नहीं रह पाता उनकी देखभाल करना तो दूर की बात है। कई देशों मे हुए अध्ययन तेजी से बदलते सामाजिक और आर्थिक परिदृश्य में बुजुर्ग सामाजिक व भावनात्मक तौर पर अकेले पडते जा रहे हैं। वर्ष 2017 में हुए एक अध्ययन के अनुसार दिल्ली और राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र में बताया गया कि इस इलाके में रहने वाले 60 साल से ज्यादा उम्र लोगों में 83 फीसदी अकेलेपन के शिकार हैं। अध्ययन में शामिल बुजुर्गों ने माना कि वे सामाजिक रूप से अलग–अलग व अकेलापन महसूस करते हैं। बताया गया कि सिर्फ दिल्ली में ही 2017 में 12 लाख से ज्यादा (दो करोड़ की आबादी में 8 फिसदी) बुजुर्ग थे जो छोटे परिवारों के बढते चलन और तेजी से बदलती परंपरागत सामाजिक मूल्य प्रणाली के कारण काफी उपेक्षा महसूस कर रहे हैं।[12] उस अकेलेपन का एक और दुष्परिणाम सामने आया कि वह आसनी से अपराधियों के निशाने पर आ जाते हैं तथा घर के सामान की चोरी के लालच में उनके साथ दुर्घटनायें हो जाती है। अतः अब उनकी सुरक्षा भी एक समस्या के रूप में देखी जा रही है। एकाकीपन से जुझती एक बुजुर्ग महिला का एक दुखद व मानवीय मामला दो वर्ष पहले भी सामने आया जब मुम्बई के उपनगर के अति आबादी वाले क्षेत्र में आवासीय फ्लैट में रहने वाली वह महिला मात्र कंकाल रूप में अपने बिस्तर पर पायी गयी, क्योंकि उसका बेटा विदेश में रहता था, तो जब वह वापस आया तो उसने अपनी मां का कंकाल पाया। उस बेटे की डेढ़ वर्ष पहले अपनी मां से बस फोन पर बात हुयी और उस बेटे ने इस समय के बीच अपनी मां की कोई सुध नही ली। यह घटना इस एकाकीपन की अति को दर्शाती है क्योंकि बेटे के अलावा न तो पडोसियों न ही मिलने–जुलने वालों ने महिला के घर से न निकलने की घटना अपनी सामाजिक जिम्मेदारी के रूप में ली ।

परम्परागत व सामुदायिक भावना की मूल्यों के ह्रास के कारण आज परिवार का प्रत्येक सदस्य कहीं अपनी शिक्षा –नौकरी–मशीन के बीच संघर्ष कर रहे हैं, जिनके चलते उनके व्यक्तिगत, पारिवारिक व सामुदायिक संबंधो के बीच एक दरार आ गयी है। बाजार की सफलता

के लिए यह आवश्यक है कि आज का युवा अपने परिवार और अपने अतीत के परिवेश का मोह त्याग दे, तभी औद्योगिक परिक्षेत्र में उत्पादन की श्रेष्ठता सिद्ध हो सकती है। यही कारण है कि परिवारों का संयुक्त ढांचा टूट रहा है। परिवार के इस विकेन्द्रित ढ़ांचे में युवाओं की शक्ति बढ़ रही है और बुजुर्गों की ताकत लगातार कमजोर पड़ती जा रही है। मां–बाप से खून का रिश्ता Hkh vc ukSoku ih<+h ds fy, vFkZghu o vuqi;ksxh yxus yxk gSA[13] वर्तमान में 70 साल से अधिक उम्र के लगभग 75 प्रतिशत वृद्ध वृद्धाश्रमों में रहने को विवश है तथा 80 साल की आयु पूर्ण कर चुकी 65 प्रतिशत महिलाओं को वृद्धाश्रम के हवाले किया जा चुका है। वस्तुस्थिति यह है कि 60 से 70 वर्ष की आयु वर्ग के 60 प्रतिशत पुरूषों के साथ घरो में खराब व्यवहार होता है, अथवा उन्हें घर से बाहर कर दिया जाता है। देश मे इस समय एक लाख अठारह हजार वृद्धाश्रम है।[14]

बढ़ते हुए वृद्धाश्रम किसी भी तरह देश की प्रगति के प्रतीक नहीं हो सकते। यह परिवार सस्था की प्रकार्यात्मकता पर प्रश्न चिन्ह लगाते हैं तथा गिरते पारिवारिक मूल्यों का मूर्त रूप प्रकट करते हैं।

मानव का स्वास्थ्य के प्रति सजग होना, बढ़ती स्वास्थ्य सुविधाओं तथा चिकित्सा क्षेत्र में प्रगति होने से मानवीय जीवन की प्रत्याषा भी बढ़ती जा रही है, जो कि विकास का सूचक है। जब इसके दूसरे पहलू को देखते हैं तो पाते हैं कि बुजुर्गों की आबादी मे तो इजाफा हो रहा है किन्तु उम्र के ढ़लते पड़ाव में उनकी देखभाल करने वाली युवा शक्ति उनके प्रति संवेदनशील नहीं रही, जो कि गिरते पारिवारिक मूल्यों को दर्शाती है। अतः इसके लिए आवश्यक है कि संयुक्त्ता, घर के बड़ों का सम्मान, निर्बल व असहाय लोगों की देखभाल की सामाजिक जिम्मेदारी के मूल्यों को पुनः पोषित किया जाए। इसके लिए आवश्यक हो जाता है कि आज के युवा अपने घर के बुजुर्गों की देखभाल व सम्मान करके अगली पीढ़ी के समाजीकरण में सकारात्मक योगदान दें, ताकि आने वाले समय मे बुजुर्गों को एक सम्मानीय जीवन मिल सके तथा युवा उनके अनुभवों से लाभान्वित हो सके।

सन्दर्भ ग्रन्थ

1. Spengler, Osward, *Man and Techniques,* Arktos Media Ld, .U.K. 2015 pg. **90**
2. Aurobindo, *TheLife Divine,* SriAurobindo Ashram Pub. dept., Pondicherry, 1939, pg. **633.**
3. Johnson, H.M., *Sociology*, Allied Publishing, New Delhi,1983 pg. **49.**
4. Leslie, G.R., *Introductory Sociology*, Oxford University Press, New York, 1980 pg. **71**.
5. Mukerjee, Radhakamal, *The Social Structure of Values,* Macmillian and Co., London, 1949 pg. **23.**

6 कुमार सुरेन्द्र, राजवीर शास्त्री, *'विशुद्ध–मनुस्मृति'*, आर्य साहित्य प्रचार, ट्रस्ट, हिन्दी 1990, पृ0 **222**

7 कुमार राजीव, *अवकाश प्राप्ति के बाद पारिवारिक समायोजन,* राधाकमल मुखर्जी चिन्तन व परम्परा, वर्ष 19 अंक 2, जु0दि0 – 2014, पृ0 **1–10**

9 राठौर जे0 एस0, *वृद्धों की स्थिति एवं जीवन दृष्टि–एक समाजशास्त्रीय अध्ययन,* मानव, वर्ष–21, अंक–4, अक्टू0–दि 1993, पृ0 **237–238**

10. Nasreen Asiya, *Elderly and their counselling needs*, social welfare, oct. 2003, pg. **37-39**

11 गुप्ता विशेष, *' 'टूटते परिवारों से निकलते सवाल,* जनसत्ता, 25.9.19, पेज **06**.

12 सिंह मनीषा, *बुजुर्ग आबादी और चुनौतिया,* जनसत्ता, 3.10.19, पेज **06**

13 गुप्ता विशेष, *' 'टूटते परिवारों से निकलते सवाल,* जनसत्ता, 25.9.19, पेज **06**.

14 गुप्ता विशेष, *' 'टूटते परिवारों से निकलते सवाल,* जनसत्ता, 25.9.19, पेज **06**.